Shodh Sangam Patrika
E-ISSN: 3049-0707, P-ISSN: 3049-172X, Volume 2 | Issue 2 | (Apr – Jun 2025)

प्रतीकात्मक से लोकात्मक: जयनगर की मिट्टी की प्रतिमाओं में देवताओं का रूपांतरण

तन्मय सेन
सहायक प्रोफेसर, एमिटी विश्वविद्यालय, कोलकाता

सारांश

यह शोध पत्र इस बात की पड़ताल करता है कि बंगाली संस्कृति में पौराणिक देवताओं - जैसे कृष्ण, बलराम, राधा, दुर्गा और अन्य - को जयनगर माजिलपुर की पारंपरिक मिट्टी की गुड़िया बनाने की प्रथाओं के माध्यम से स्थानीय रूपों में कैसे बदला गया है। ये आकृतियाँ, जो कभी शास्त्रीय प्रतीकात्मकता का हिस्सा थीं, को सरलीकृत, जीवंत और अभिव्यंजक रूपों में फिर से कल्पना की गई है जो बंगाल के ग्रामीण सौंदर्यशास्त्र और सांस्कृतिक लोकाचार को दर्शाती हैं। महज खिलौने होने से कहीं आगे, ये गुड़िया स्थानीय अनुष्ठानों और लोक कथाओं में धार्मिक, प्रदर्शनकारी और प्रतीकात्मक उद्देश्यों की पूर्ति करती हैं। शंभूनाथ दास, मनमथनाथ दास और पंचगोपाल दास जैसे प्रमुख कलाकारों के काम पर ध्यान केंद्रित करते हुए, यह अध्ययन जांचता है कि कैसे उनकी गुड़िया दैवीय आकृतियों की स्थानीयकृत पुनर्व्याख्या को मूर्त रूप देती हैं, जो पारंपरिक मिथक को रोज़मर्रा की ग्रामीण पहचान के साथ मिलाती हैं। दृश्य और प्रासंगिक विश्लेषण के माध्यम से, यह शोधपत्र जांचता है कि ये गुड़िया क्यों बनाई जाती हैं, वे सामुदायिक जीवन में कैसे काम करती हैं, और वे लोक धार्मिकता और दृश्य कहानी कहने के जीवंत संग्रह का प्रतिनिधित्व कैसे करती हैं.

मुख्य शब्द: *जयनगर मजिलपुर, मिट्टी की प्रतिमा,लोक देवी-देवता, बंगाल की लोक संस्कृति।*

परिचय

बंगाल के कई जिले जैसे कृष्णनगर, बीरभूम, बांकुरा और अन्य जिले अपनी अनूठी गुड़िया बनाने की परंपराओं के लिए जाने जाते हैं। मेरा शोध जयनगर माजिलपुर की टेराकोटा गुड़िया पर केंद्रित है, जो बंगाल के ग्रामीण जीवन में गहराई से निहित एक परंपरा है। सरल किंतु अभिव्यंजक रूप में तैयार की गई ये गुड़ियाएं गांव की संस्कृति और आम लोगों के रोजमर्रा के जीवन की छाप रखती हैं।

जॉयनगर माजिलपुर की गुड़िया को मोटे तौर पर दो धाराओं में वर्गीकृत किया जा सकता है: एक सामाजिक जीवन का प्रतिनिधित्व करती है, और दूसरी स्थानीय और पौराणिक देवी-देवताओं को दर्शाती है। महज खिलौनों से कहीं आगे, ये रचनाएं ग्रामीण मान्यताओं, सामाजिक मानदंडों, धार्मिक प्रथाओं और कलात्मक अभिव्यक्तियों के प्रतिबिंब के रूप में काम करती हैं। कला का यह रूप सुंदरबन क्षेत्र में प्रचलित अनुष्ठानों, त्योहारों और आस्थाओं को दर्शाता है, जो इसे स्थानीय परंपरा का जीवंत संग्रह बनाता है। गुड़िया बनाने की यह परंपरा लगभग 250 साल पुरानी है। दास परिवार के एक वर्तमान व्यवसायी शंभूनाथ दास के अनुसार, उनके पूर्वज कालीचरण पेयाडा जेसोर से दत्ता जमींदारों के साथ जयनगर चले गए इस समृद्ध लोक कला

परंपरा की शुरुआत। 1986 में (डे, जी. 2024), इस शिल्प को राष्ट्रीय मान्यता मिली जब इसी परिवार के एक सदस्य मन्मथ दास को प्रतिष्ठित राष्ट्रपति पुरस्कार मिला, जिससे यह कला रूप सुर्खियों में आया।

जयनगर माजिलपुर (दक्षिण 24 परगना) की मिट्टी की गुड़िया ने एक अनूठी दृश्य भाषा विकसित की है जो बंगाल की ग्रामीण परंपराओं और दैनिक जीवन की गहरी परतों को दर्शाती है। इन आकृतियों में एक विप्रतिमाशिष्ट "मिट्टी की गंध" होती है - बंगाली घरों की माताओं, मौसी या दादा-दादी की याद दिलाने वाली विशेषताओं द्वारा आकारित अंतरंगता की भावना। ये मूर्तियाँ न केवल पौराणिक कथाओं के प्रतीक हैं बल्कस्थानीय वास्तविकताओं का मूर्त प्रतिबिंब बन जाती हैं। काली, लक्ष्मी, कृष्ण, शिव-पार्वती, बोनबीबी और ओलाबीबी जैसे देवताओं को घरेलू, मानवीय रूपों में प्रस्तुत किया जाता है, जो अक्सर परिचित पड़ोसियों के समान होते हैं। इस संदर्भ में, देवता दूर के खगोलीय प्राणी नहीं हैं, बल्कि समुदाय का हिस्सा हैं। यह परिवर्तन - प्रतीकात्मक से स्थानीय भाषा में - दृश्य पुनर्कल्पना का मूल है जिसकी इस अध्ययन में जांच की गई है।

चित्र 1 लक्ष्मी देवी

चित्र 1 (स्रोत - लेखक द्वारा छायांकित)

सिर पर एक मामूली मुकुट से सजी एक छोटी मिट्टी की मूर्ति, हाथ में एक बर्तन (मृदभांड) पकड़े हुए, और पैरों के नीचे दो सरल रेखाओं से चिह्नित, जो उल्लू का प्रतीक है - ये न्यूनतम विशेषताएं यह दर्शाने के लिए पर्याप्त हैं कि यह देवी लक्ष्मी हैं। हालाँकि, इस चित्रण में शाही भव्यता या सजावटी अपव्यय का कोई भाव नहीं है। लाल साड़ी पहने, कोमल मुस्कान और कोमल आँखों वाली, वह पड़ोस की माँ या बहन जैसी दिखती हैं। इस मूर्ति के माध्यम से, देवी ग्रामीण घर के भीतर एक वास्तविक, मूर्त उपस्थिति रखती हैं। जबकि लक्ष्मी की शास्त्रीय छवि धन और समृद्धि का प्रतीक है, यहाँ उन्हें एक मेहनती महिला के रूप में देखा जाता है जो घर का प्रबंधन करती है, मिट्टी का बर्तन पकड़े हुए - देवत्व और मानवता दोनों का अवतार। दृश्य व्याख्या की इस शैली को सबसे पहले कलाकार मोनमाथनाथ दास ने पेश किया था, जिनका काम आज भी कई ग्रामीण मेलों में देखा जा सकता है।

चित्र 2 शिव-पार्वती और गणेश:

चित्र 2 (स्रोत - लेखक द्वारा छायांकित)

"शिब घोरे फिरलो, कोले गोनेश, परबोती हसे, थालय मिश्तन्नो बेश। गए छै, हेट थोले, मुखे अच्छे शांति, शिब जे अमादेर घोरेर-आई एक अतियो नीति।" (माजिलपुर पलागान समित, मौखिक रिकॉर्ड, 2024)

18वीं शताब्दी में, बंगाल में एक संक्रमणकालीन अवधि के दौरान, समाज, राजनीति और पारिवारिक संरचनाएँ विभिन्न तरीकों से गहराई से बाधित हुईं। आम लोगों के बीच इस उथल-पुथल की छवि अन्नदमंगल कविता में सजीव रूप से चित्रित है। भरतचंद्र द्वारा लिखित इस साहित्यिक कृति ने आम लोगों को अपनी आध्यात्मिक चेतना के केंद्र में रखा। परिणामस्वरूप, पौराणिक देवताओं को आम इंसानों के रूप में चित्रित किया गया। उदाहरण के लिए, भगवान शिव - सर्वोच्च देवता, देवताओं के देवता और ब्रह्मांड के शासक - को एक साधारण, भूखे, भोजन चाहने वाले व्यक्ति के रूप में या कभी-कभी पड़ोसी घर के एक परिचित शराबी के रूप में चित्रित किया जाता है। कुछ उदाहरणों में, वह पारिवारिक भावनाओं और चेतना का भी प्रतीक है।

कविता की ये पंक्तियाँ अक्सर पलागन प्रदर्शनों में उपयोग की जाती हैं और शिव की बंगाली छवि की एक विशद झलक पेश करती हैं। शिव को एक गोल पेट, गले में एक साँप, हाथ में एक कपड़े का थैला और मुस्कुराते हुए चेहरे के साथ चित्रित किया गया है - जो एक गाँव के किसान या स्थानीय तपस्वी जैसा दिखता है। वह एक भयंकर रुद्र नहीं हैं, बल्कि एक सौम्य और आश्वस्त करने वाले देवता हैं। पार्वती, जिन्हें गणेश को गोद में लिए हुए दिखाया गया है, एक माँ के रूप में घर लौटती हुई दिखाई देती हैं - उनका चेहरा स्नेह से भरा हुआ है, उनका श्रृंगार न्यूनतम है। यह प्रतिनिधित्व दृश्य रूप से पौराणिक कथाओं को प्रस्तुत करता है, जबकि बंगाल के घरेलू संदर्भ में एक गहरा भावनात्मक संबंध भी स्थापित करता है। इन मिट्टी की गुड़ियों में गणेश बच्चे के रूप में दिखाई देते हैं - गोल-मटोल गालों और हंसमुख चेहरे के साथ - एक चंचल खिलौने की तरह, फिर भी एक माँ के आशीर्वाद और एक बच्चे के विश्वास का प्रतीक है।

इस तरह के दृश्यांकन को कई बंगाली लोक कथाओं द्वारा भी आकार दिया गया है। दक्षिण 24 परगना के कुछ हिस्सों से ऐसा ही एक उदाहरण स्थानीय कहानी "शिबर कोलशी हरानो" ("शिव का खोया हुआ पानी का बर्तन") है। इस कहानी में, पार्वती शिव को उनके लापरवाह और उदासीन व्यवहार के लिए डांटती हैं, और अंततः, शिव एक मिट्टी के बर्तन को पकड़े हुए, गंभीर चेहरे के साथ घर लौटते हैं, और एक लकड़ी के स्टूल पर बैठते हैं। इसी दृश्य ने आज ग्रामीण मेलों में देखी जाने वाली कई शिव-पार्वती मिट्टी की मूर्तियों को प्रेरित किया है। यहाँ, पौराणिक देवता दैनिक घरेलू जीवन के प्रतिभागियों में बदल जाते हैं - बंगाली मध्यम वर्ग के घर का प्रतिबिंब बन जाते हैं।

चित्र 3 कालियादमन

चित्र 3 (स्रोत - लेखक द्वारा छायांकित)

जॉयनगर माजिलपुर में निर्मित मिट्टी की मूर्तियों में से एक विशेष रूप से उल्लेखनीय आकृति "कालियादमन" की है - जिसमें युवा कृष्ण कई सिर वाले नाग कालिया पर नृत्य करके उसे वश में करते हुए दिखाई देते हैं। हालाँकि यह भागवत पुराण से लिया गया एक पौराणिक प्रसंग है, लेकिन जॉयनगर की मिट्टी की गुड़िया परंपरा में इसका चित्रण एक सरल, जीवंत और विशिष्ट ग्रामीण रूप में किया गया है। इस मूर्ति में, कृष्ण का चेहरा गोल है, बड़ी अभिव्यंजक आँखें और एक सौम्य मुस्कान है - बिल्कुल पड़ोस के लड़के की तरह। उन्होंने पीली धोती पहनी है, लाल मुकुट गाँव की शैली की टोपी जैसा है, और उनका नीला शरीर सादे सफेद पृष्ठभूमि के साथ सामंजस्य बिठाता है। उनके नीचे नाग कालिया को न्यूनतम रेखाओं में खींचा गया है - एक भयानक प्राणी के रूप में नहीं, बल्कि नृत्य के लिए एक शैलीगत आधार के रूप में। इस तरह, "राक्षस-वध" कथा एक रंगीन और लयबद्ध दृश्य क्षण बन जाती है।

इस तरह का परिवर्तन स्थानीय दृश्य भाषा की पहचान है। पौराणिक कहानियों को मिट्टी की गुड़िया की कल्पना के माध्यम से इस तरह से रूपांतरित किया जाता है कि एक बच्चा भी इसे समझ सकता है, और ग्रामीण दर्शक आसानी से इससे जुड़ सकते हैं। यहां कृष्ण कोई दूर का अलौकिक प्राणी नहीं है - वह एक बच्चा, एक दोस्त, एक चंचल लड़का, यहां तक कि एक परिचित पड़ोसी भी बन जाता है। यह दृश्य

लोककथा का एक रूप बन जाता है, जहां धार्मिक मिथकों को रोजमर्रा की स्थानीय वास्तविकता के रंगों में चित्रित किया जाता है। ऐसे निरूपणों के उदाहरण मन्मथनाथ दास और पंचगोपाल दास के कार्यों में पाए जा सकते हैं, जिन्होंने स्थानीय मेलों और प्रदर्शनियों के लिए कई बार इस दृश्य को फिर से बनाया है। ये कालियादमन गुड़िया विशेष रूप से मदारपुर बरुनी मेले और राधारानी मेले में लोकप्रिय हैं, जहां दर्शक जीवंत, मानवीय रूप में प्रस्तुत परिचित कहानी से जुड़ते हैं।

चित्र 4 राधा

चित्र 4 (स्रोत - लेखक द्वारा छायांकित)

"गयेर मेये, घोमता तेने चोलछे पोले पोले,चोखे कपाट लोज्जा, तोबू प्रेमर जोल ढोले।" (काजी नजरुल इस्लाम, 'लोकर प्रेम', 1930)

जयनगर माजिलपुर की मिट्टी की मूर्तियों में, राधा की आकृति एक शानदार उदाहरण के रूप में सामने आती है कि कैसे एक पौराणिक महिला चरित्र को एक ग्रामीण, भरोसेमंद महिला में बदल दिया जाता है। जबकि वैदिक या शास्त्रीय राधा दिव्य प्रेम और पारलौकिक परमानंद का प्रतिनिधित्व करती है, इन स्थानीय मिट्टी की गुड़ियों में वह एक मामूली गाँव की दुल्हन की तरह दिखती है। उसकी आँखें बड़ी हैं, उसके चेहरे पर एक कोमल मुस्कान है, और उसके होठों से एक सौम्य सादगी झलकती है। वह लाल बॉर्डर वाली साड़ी पहनती है, और सबसे खास बात यह है कि उसका दाहिना हाथ उसकी साड़ी के पल्लू के किनारे को इस तरह से पकड़े हुए है कि ऐसा लगता है कि वह अपना सिर ढकने वाली है - शर्मीली, विनम्र गाँव की महिलाओं के बीच एक आम हरकत। यह मुद्रा बंगाली ग्रामीण परंपरा में शालीनता, विनम्रता और गरिमा का प्रतीक है। यह दृश्य मुद्रा बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय के लेखन में पाए जाने वाले बंगाली गृहिणियों के वर्णनों, विशेष रूप से आनंदमठ में महिला पात्रों के वर्णनों से काफी मिलती-जुलती है। इस तरह के चित्रण सीधे जयनगर की राधा की आकृतियों में प्रतिध्वनित होते हैं। दृश्य रूप से एक पौराणिक संदर्भ को संदर्भित करते हुए, छवि वास्तव में बंगाली जीवन में निहित एक लोक नायिका का प्रतिनिधित्व करती है। कुछ लोक प्रदर्शन और पलागान

गीतों में राधा को "राखहलबौ" (गाय की पत्नी) के रूप में भी संदर्भित किया जाता है, जो दिव्य भव्यता पर उसकी दैनिक घरेलू भूमिका पर जोर देता है।

राधा की ये मूर्तियाँ बोरो माचुआ, माजिलपुर में आयोजित राधारानी मेले में विशेष रूप से लोकप्रिय हैं, जहाँ उन्हें भक्ति और स्मृति की वस्तुओं के रूप में बेचा जाता है। यहाँ भी, राधा एक रहस्यमय देवी नहीं, बल्कि एक परिचित, सांस्कृतिक रूप से निहित महिला बन जाती है।

चित्र 5 गणेश जननी

चित्र-5 (स्रोत - द बंगाल स्टोर, [मिट्टी की गुड़िया की छवि]।

जयनगर माजिलपुर की मिट्टी की गुड़िया परंपरा में सबसे कोमल और सांस्कृतिक रूप से निहित चित्रणों में से एक "गणेश जननी" की आकृति है - जहां पार्वती को अपने छोटे बेटे गणेश को गोद में लिए बैठे हुए दिखाया गया है। जबकि कल्पना पौराणिक मातृत्व की भव्यता से उत्पन्न होती है, यहाँ चित्रण दैवीय तपस्या से बहुत दूर है। इन स्थानीय मूर्तियों में, पार्वती को एक रोजमर्रा की बंगाली माँ के रूप में चित्रित किया गया है - स्नेही, पोषण करने वाली और परिचित। इस मूर्ति में, पार्वती का चेहरा गोल है, बड़ी, अभिव्यंजक आँखों के साथ। वह लाल किनारे वाली पारंपरिक बंगाली अटपौरे शैली की साड़ी पहनती हैं, उनके सिर पर एक छोटा मुकुट और गले में एक मंगलसूत्र (पवित्र हार) होता है। उनकी गोद में झूलते गणेश बाधाओं के देवता या मक्खन चुराने वाले के रूप में नहीं, बल्कि बस एक प्यारे बच्चे के रूप में दिखाई देते हैं - मोटा, मुस्कुराता हुआ और मासूमियत से भरा हुआ, जैसे कोई बच्चा खेल में खोया हुआ हो। माँ की नज़र कठोर या दिव्य नहीं है -यह एक माँ की कोमल और चौकस आँखों को दर्शाती है जो अपने बच्चे से गहराई से जुड़ी हुई है। मातृत्व की यह सांसारिक छवि पार्वती को स्वर्गीय आसन से हटा देती है और उन्हें प्यार से मानवीय क्षेत्र में रखती है। यहाँ, दिव्य घरेलू बन जाता है। यह दृश्य कथा एक गहरी स्थानीय स्त्रीत्व को दर्शाती है, जहाँ देवी अब एक दूर की प्रतीक नहीं है, बल्कि एक माँ है जो पोषण करती है, रक्षा करती है और प्यार करती है। अलंकरण, रंग पैलेट और मुद्रा सभी पवित्र से परिचित तक के इस परिवर्तन में योगदान करते हैं - बंगाली घरेलू जीवन का दर्पण।

इतिहासकार डॉ. शुवंकर मंडल के अनुसार, जयनगर की गणेश जननी मिट्टी की मूर्तियों की रचना कालीघाट पटचित्र में कृष्ण के साथ यशोदा के दृश्य रूप के साथ उल्लेखनीय समानताएं साझा करती है। दोनों में मातृ स्नेह, गोल आकार और प्रतीकात्मक हाव-भाव हैं जो मानवीय अनुभव के संदर्भ में दिव्य प्रेम को दर्शाते हैं। पौराणिक देवी-देवताओं के प्रसिद्ध चित्रणों के अलावा, जयनगर माजिलपुर की मिट्टी की गुड़िया स्थानीय लोक देवताओं के एक समृद्ध पंथ को भी चित्रित करती हैं, जिनकी उत्पत्ति ग्रामीण बंगाल के रोजमर्रा के जीवन, भय और विश्वासों में गहराई से अंतर्निहित है। ये आकृतियाँ केवल सजावटी या अनुष्ठानिक उद्देश्यों के लिए नहीं बनाई गई हैं - वे सामुदायिक स्मृति, सामाजिक पदानुक्रम और सांस्कृतिक अभ्यास द्वारा आकार दिए गए विश्वास प्रणालियों के दृश्य अवतार हैं। इनमें से कई देवता धार्मिक विभाजनों से परे महत्वपूर्ण अंतर-सामुदायिक प्रासंगिकता रखते हैं। एक उल्लेखनीय उदाहरण बोनबीबी है, जो सुंदरबन और दक्षिणी बंगाल में हिंदू और मुस्लिम दोनों समुदायों द्वारा पूजनीय है।

चित्र 6, 7 बनबीबी

चित्र-6 और 7 (स्रोत - मंडल, एस. (2025)।

एक महत्वपूर्ण लोक देवी के रूप में पूजनीय हैं। बोनबीबी केवल एक धार्मिक व्यक्ति नहीं हैं, बल्कि पारिस्थितिक और सामाजिक संतुलन का प्रतीक हैं। वह एक आध्यात्मिक रक्षक का प्रतिनिधित्व करती हैं जो जंगल की कठोर परिस्थितियों में मानव अस्तित्व में सहायता करती हैं - मनुष्यों और जानवरों के सह-अस्तित्व की रक्षा करती हैं। उनकी पूजा, लोक प्रदर्शन, मूर्ति-निर्माण और स्थानीय कला में चित्रण एक गहरी सांस्कृतिक चेतना को दर्शाते हैं जहाँ धर्म, भूगोल और लोक विश्वास गहराई से जुड़े हुए हैं। डॉ. सुवंजन मंडल के विश्लेषण के अनुसार, बोनबीबी का सबसे पहला विवरण बोनबीबीर जोहुरनामा में मिलता है, जहाँ उन्हें एक पिरानी या सूफी महिला संत के रूप में चित्रित किया गया है। यह वर्णन बोनबीबी को इस्लामी आध्यात्मिक परंपरा के भीतर रखता है, फिर भी, बंगाल के लोक भूभाग में पहुँचने पर, वह हिंदू और मुस्लिम धार्मिक प्रथाओं के संगम से बनी एक अनूठी लोक देवता बन जाती हैं। उन्हें बाघ के हमलों से परेशान लोगों

को बचाने वाली के रूप में देखा जाता है, जो करुणा और नैतिक शक्ति का प्रतीक बन जाती हैं - यह दोहरी पहचान उन्हें धार्मिक सीमाओं से परे एक सार्वभौमिक माँ के रूप में स्थापित करती है। लोकप्रिय कल्पना में, बोनबीबी कई रूपों में दिखाई देती है - कभी बाघ पर बैठी हुई, कभी हिरण या मुर्गे पर। ये छवियाँ केवल सौंदर्यपूर्ण दृश्य विकल्प नहीं हैं; प्रत्येक जानवर प्रतीकात्मक और स्थानीय प्रासंगिकता रखता है। प्रतिनिधित्व में यह बहुलता दर्शाती है कि कैसे एक धार्मिक चरित्र स्थानीय जीवन शैली का दर्पण बन जाता है।

बोनबीबी जात्रा-पाला (लोक नाट्य प्रदर्शन) धार्मिक या नाटकीय रूप से कहीं अधिक है - यह बंगाल की लोक संस्कृति की एक गतिशील धारा है। उनकी कहानियाँ संगीत, संवाद और नृत्य के माध्यम से बताई जाती हैं, जो मुख्य रूप से दो कथात्मक आर्क के इर्द-गिर्द घूमती हैं: पीड़ितों की उद्धारक के रूप में बोनबीबी, और दक्षिण रे और दोक्खिनी के साथ उनका नैतिक संघर्ष। यह संघर्ष केवल पौराणिक नहीं है, बल्कि प्रतीकात्मक है - प्रकृति, न्याय और सह-अस्तित्व का प्रतिनिधित्व करता है। ज्यादातर वसंत के दौरान आयोजित होने वाले ये प्रदर्शन महत्वपूर्ण सामाजिक कार्यक्रम बन जाते हैं जो धर्मों, जातियों और सामाजिक वर्गों के लोगों को एकजुट करते हैं। इन जात्रा-पालों में प्रदर्शन की भाषा धार्मिक और सामाजिक संश्लेषण के लिए एक व्यापक मंच बनाती है। बोनबीबी का नाम ही इस सद्भाव को दर्शाता है - 'बोन' का अर्थ है जंगल और 'बीबी' का अर्थ है एक मुस्लिम महिला। उनका नाम ही हिंदू-मुस्लिम सह-अस्तित्व का संदेश देता है, जो बंगाल की लोक परंपराओं में लंबे समय से समाया हुआ मूल्य है। ऐसे प्रदर्शनों के माध्यम से, बोनबीबी आशा का प्रतीक बन जाती हैं और ग्रामीण आबादी को संकट के समय समाधान प्रदान करने वाली एक माँ जैसी आकृति बन जाती हैं। जयनगर माजिलपुर और उसके आस-पास के इलाकों में स्थानीय कारीगर मिट्टी की मूर्तियों के ज़रिए बोनबीबी को एक अलग रूप देते हैं. पारंपरिक धार्मिक प्रतिमाओं का सख्ती से पालन करने के बजाय, वे उसे एक देहाती, स्वदेशी शैली में फिर से कल्पना करते हैं. उसके चेहरे की विशेषताएं और हाव-भाव एक ग्रामीण बंगाली महिला की सादगी, लचीलापन और पालन-पोषण करने वाले चरित्र को दर्शाते हैं. इन मूर्तियों में अक्सर कम स्टूल (चौकी), धातु की प्लेट या पांडुलिपियाँ जैसी भौतिक वस्तुएँ शामिल होती हैं - ऐसी वस्तुएँ जो मूर्ति को सीधे स्थानीय घरेलू संदर्भ से जोड़ती हैं. ये सिर्फ़ प्रतीकात्मक प्रतिनिधित्व नहीं हैं बल्कि इतिहास, भूगोल और विश्वास के मिश्रण से बनी कहानियाँ हैं. सुंदरबन के प्राकृतिक वातावरण और इसके भीतर जीवित रहने के संघर्ष ने इस क्षेत्र में बोनबीबी को अद्वितीय महत्व दिया है. उसके आस-पास की सांस्कृतिक प्रथाएँ - चाहे वह जात्रा हो, लोकगीत, मिट्टी की गुड़िया या मूर्तियाँ - एक भौगोलिक रूप से निहित लोक परंपरा बनाती हैं, जो समय के साथ स्थानीय लोगों के लिए शरण, विश्वास और पहचान का प्रतिनिधित्व करती हैं.

ग्रामीण धार्मिक प्रथाओं और मेलों में मोजिलपुर की गुड़ियों का सांस्कृतिक पुनर्पाठ

ग्रामीण बंगाल में, धार्मिक विश्वास और सामुदायिक अनुष्ठान गजानन, चरक मेला और नील पूजा जैसे त्यौहारों के साथ गहराई से जुड़े हुए हैं - ये उत्सव भक्ति, शारीरिक तपस्या और मौसमी बदलावों पर आधारित हैं। ये केवल धार्मिक आयोजन नहीं हैं, बल्कि सामूहिक अभिव्यक्ति के स्थान हैं, जहाँ निम्न वर्ग के समुदाय केंद्रीय भूमिका निभाते हैं। गजान, जिसे अक्सर शिव के नीलकंठ रूप से जोड़ा जाता है, में आत्म-त्याग और

शारीरिक सहनशक्ति के अनुष्ठान शामिल हैं। चरक मेला, जो विशेष रूप से श्रीमोती जैसे गाँवों में जीवंत है, बंगाली वर्ष के अंत में तपस्वी प्रदर्शन और सूर्य को प्रतीकात्मक प्रसाद चढ़ाता है (बिस्वास, एस.पी.) ।

इन धार्मिक और सामाजिक अनुष्ठानों के संदर्भ में ही मोजिलपुर की मिट्टी की गुड़ियों की प्रेरणा उभरी है। गजानन, चरक और नील पूजा जैसे त्योहारों की कथाओं, पात्रों और प्रथाओं से प्रेरणा लेते हुए, गुड़ियों को शिव, पार्वती, गणेश-जननी, लोक देवताओं और तपस्वियों के रूप में तैयार किया जाता है। ये केवल अनुष्ठान की वस्तुएँ या खिलौने नहीं हैं, बल्कि क्षेत्रीय मान्यताओं और सांस्कृतिक प्रथाओं का प्रतीकात्मक प्रतिनिधित्व हैं।

इन धार्मिक अनुष्ठानों और मेलों के माहौल में ही मोजिलपुर की मिट्टी की गुड़िया की प्रेरणा विकसित हुई है। शिव-पार्वती, गणेश-जननी और काली जैसे देवताओं की छोटी मूर्तियाँ गढ़ी जाती हैं, जिनका उपयोग न केवल पूजा के लिए किया जाता है, बल्कि ग्रामीण मान्यताओं और लोक परंपराओं की प्रतीकात्मक अभिव्यक्ति के रूप में भी किया जाता है। हालाँकि ये गुड़िया मूल रूप से बच्चों के खिलौने के रूप में शुरू हुई थीं, लेकिन अब इन्हें गजान, बरुनी, बसंत, राधारानी और मदारपुर मेलों जैसे त्योहारों में बेचा और प्रदर्शित किया जाता है, और धार्मिक नाटकों और लोक प्रदर्शनों में भी इनका उपयोग किया जाता है। ये गुड़िया न केवल मेलों में पाई जाती हैं, बल्कि विभिन्न सांस्कृतिक कार्यक्रमों, स्कूल कला प्रदर्शनियों, हस्तशिल्प मेलों (जैसे बांग्ला हाट, राज्य हस्तशिल्प एक्सपो) और राष्ट्रीय प्रदर्शनियों में भी प्रदर्शित की जाती हैं। स्थानीय लोक संस्कृति को उजागर करने के लिए, इन गुड़ियों का उपयोग विभिन्न थिएटर समूहों और लोक प्रदर्शनों में किया जाता है। कभी-कभी, गुड़िया जीवंत प्रॉप्स की भूमिका निभाती हैं, जिसके चारों ओर कई मूर्तियों या आकृतियों का उपयोग करके लोक नाटकों (पालगान) के पूरे दृश्य निभाए जाते हैं। इस तरह मोजिलपुर की मिट्टी की गुड़िया केवल धार्मिक वस्तुएँ नहीं हैं, बल्कि ग्रामीण बंगाल की मान्यताओं, त्योहारों, मेलों, लोक नाट्यों और लोक विरासत की वाहक और संरक्षक बन गई हैं। भविष्य में, ये गुड़िया अध्ययन के एक महत्वपूर्ण क्षेत्र के रूप में काम कर सकती हैं, क्योंकि वे बंगाल की एक अनूठी दृश्य भाषा का प्रतिनिधित्व करती हैं।

निष्कर्ष

मोजिलपुर की मिट्टी की गुड़िया ग्रामीण बंगाल की आस्था, उत्सव और लोक अभिव्यक्ति की समृद्ध ताने-बाने की जीवंत अभिव्यक्ति के रूप में खड़ी हैं। गजान, चरक मेला और नील पूजा जैसे पारंपरिक त्योहारों के अनुष्ठानों और वातावरण में निहित, ये हस्तनिर्मित आकृतियाँ महज खिलौने या सजावटी वस्तुओं की भूमिका से परे हैं। वे जीवित अभिलेखागार के रूप में उभरती हैं - अधीनस्थ समुदायों की दृश्य और प्रदर्शनकारी संस्कृति, भक्ति के सौंदर्य शास्त्र और ग्रामीण जीवन की विकसित होती कहानियों को संरक्षित करती हैं। चाहे धार्मिक मेलों में प्रदर्शित किया जाए, लोक नाटकों में इस्तेमाल किया जाए, या सांस्कृतिक प्रदर्शनियों में प्रस्तुत किया जाए, ये गुड़िया पवित्र और धर्मनिरपेक्ष, अतीत और वर्तमान को जोड़ती हैं। कला वस्तुओं और सांस्कृतिक प्रतीकों दोनों के रूप में, मोजिलपुर की मिट्टी की गुड़िया गहन विद्वत्तापूर्ण जुड़ाव को आमंत्रित

करती हैं, जो इस बात की अंतर्दृष्टि प्रदान करती हैं कि भौतिक संस्कृति किस तरह क्षेत्रीय पहचान, विश्वास प्रणालियों और बंगाल की लोक विरासत की गतिशील निरंतरता को आकार देती है और दर्शाती है।

संदर्भ

1. दास, बिस्वजीत। (2022). पश्चिमबंगेर सुंदरबन अंचलेर बनबिबी, मनसा एबंग शीतला पालार उत्पत्ति ओ क्रमविकाश [डॉक्टोरल डिज़र्टेशन, रवीन्द्र भारती विश्वविद्यालय.शोधनगंगा] http://hdl.handle.net/10603/544940
2. दास, पी. (2022). *बंगाल की मिट्टी की गुड़ियों पर सामाजिक-धार्मिक प्रभाव का अध्ययन, विशेष रूप से जयनगर माजिलपुर क्षेत्र के संदर्भ में* (डॉक्टरेट शोध प्रबंध, कल्याणी विश्वविद्यालय)। शोधनगंगा। http://hdl.handle.net/10603/544940
3. बिस्वास, सु. प. (2020)। पीपल–नेचर–कल्चर ऑफ अ प्लेस: अंडरस्टैंडिंग फेस्टिवल्स ऑफ़ द सुंदरबन्स। म. सिंह (संपा.), *आईएनटीएसीएच लेक्चर सीरीज़ 2019–20* (पृष्ठ 151–173)। नई दिल्ली: आईएनटीएसीएच।
4. ख़ान, रफ़ीक़ुल इस्लाम। (2015)। *द सुंदरबन्स: फ़ोक एंड फ़ोक रिलिजन*। प्राप्त किया गया https://www.academia.edu/11596316/The_Sundarbans_Folk_and_Folk_Religion_by_Rafiqul_Islam_Khokan से।
5. मंडल, स. (2025)। *जयनगर–मजिलपुरेर माटीर पुतुल: परिवारेर लौकिक देव–देवी—एकटि चित्रमय परिचय*। सुचेतना प्रिंटिंग एंड पब्लिशिंग। ISBN: 978-93-94804-95-1।
6. रॉय, टी. (1995)। बंगाल के लोक देवता और उनका लोकप्रिय प्रतिनिधित्व। *जर्नल ऑफ़ साउथ एशियन फोक कल्चर*, *12*(3), 55–72।
7. देय, गौरी। (2024, 1 अप्रैल)। जयनगर-मजिलपुर की मिट्टी की गुड़ियाएँ: एक शिल्प के माध्यम से दृष्टि—परंपरा और उसकी कार्यपद्धति। *डिज़ाइन फ़ॉर ऑल इंस्टिट्यूट ऑफ़ इंडिया* (खंड 19)। डिज़ाइन फ़ॉर ऑल इंस्टिट्यूट ऑफ़ इंडिया द्वारा प्रकाशित।